

प्रशंसां सुतरां कृत्वा मुनीन्द्रस्य विचक्षणः। धर्मे श्रीमज्जिनेन्द्रोक्ते संजातो तीव्रनिश्चलः ॥२४॥
 दुष्टात्मा कुरुते दोषं धर्मे श्रीमज्जिनेशिनाम्। स स्वभावेन निर्दोषो निरभ्रो भास्करो यथा ॥२५॥
 यः श्रीदेवनिकायभूपतिशतैर्नागेन्द्रसत्त्वेचरैः पूज्यो भक्तिभरेण शर्मनिलयो धर्मो जिनेन्द्रोदितः।
 नाना दुःखविनाशको भवहरः स्वर्गापवर्गप्रदः स श्रीमान्भवतां जगत्त्रयहितो दद्याच्छुभं मङ्गलम् ॥२६॥

इति कथाकोशे जयसेननृपस्याख्यानं समाप्तम्।

८२. शकटालमुनेराख्यानम्

नत्वा पादद्वयं जैनं शर्मदं त्रिजगद्धितम्। ब्रुवेऽहं शकटालस्य मुनेर्वृत्तं बुधैर्मतम् ॥१॥
 पुरे पाटलिपुत्रेऽभूद्राजा नन्दोतिभद्रधीः। मंत्री श्रीशकटालाख्यो जैनधर्मरतस्तराम् ॥२॥

देना नहीं, फिर वे क्यों ऐसा करने चले? और पिताजी तो इनके इतने बड़े भक्त थे और न केवल यही बात थी कि पिताजी ही इनके भक्त हों, ये साधु भी तो उनसे बड़ा प्रेम करते थे; घण्टों तक उनके साथ इनकी धर्मचर्चा हुआ करती थी। फिर इस सन्देह को जगह नहीं रहती कि एक निस्पृह और शान्त योगी यह अनर्थ किया जा सके। तब हुआ क्या? बेचारा वीरसेन बड़ी कठिन समस्या में फँसा। वह इस प्रकार चिन्तातुर हो कुछ सोच-विचार कर ही रहा था कि उसकी नजर सामने की भीत पर जा पड़ी। उस पर यह लिखा हुआ, कि “दर्शन या धर्म की डाह के वश होकर ऐसा हुआ है” देखते ही उसकी समझ में उस समय सब बातें बराबर आ गईं उसके मन को अब रहा-सहा सन्देह भी दूर हो गया। उसकी अब मुनिराज पर अत्यन्त श्रद्धा हो गई। उसने मुनिराज के धैर्य और सहनपने की बड़ी प्रशंसा की। जैनधर्म के विषय में उसका पूरा-पूरा विश्वास हो गया। जिनका दुष्ट स्वभाव है, जिनसे दूसरों के धर्म का अभ्युदय-उन्नति नहीं सही जाती ऐसे लोग जिनधर्म सरीखे पवित्र धर्म पर चाहे कितना ही दोष क्यों न लगावें, पर जिनधर्म तो बादलों से न ढके हुए सूरज की तरह सदा ही निर्दोष रहता है ॥२३-२५॥

जिस धर्म को चारों प्रकार के देव, विद्याधर, चक्रवर्ती, राजा-महाराजा आदि सभी महापुरुष भक्ति से पूजते-मानते हैं, जो संसार के दुःखों का नाश कर स्वर्ग या मोक्ष का देने वाला हैं, सुख का स्थान है, संसार के जीव मात्र का हित करने वाला है और जिसका उपदेश सर्वज्ञ भगवान् ने किया है और इसीलिए सबसे अधिक प्रमाण या विश्वास करने योग्य है, वह धर्म-वह आत्मा की एक खास शक्ति मुझे प्राप्त होकर मोक्ष का सुख दे ॥२६॥

८२. शकटाल मुनि की कथा

सुख के देने वाले संसार का हित करने वाले जिनेन्द्र भगवान् के चरणों को नमस्कार कर शकटाल मुनि की कथा लिखी जाती है ॥१॥

पाटलिपुत्र (पटना) के राजा नन्द के दो मंत्री थे। एक शकटाल और दूसरा वररुचि। शकटाल

द्वितीयस्तु कुधीर्मत्री वरादिरुचिनामभाक्। तौ परस्परमत्यन्तं वैरिणौ भवत स्म च ॥३॥
 एकदा मुनिभिर्युक्तो महापद्मो मुनीश्वरः। तत्रायातो जगत्पूज्यो जिनतत्त्वविदांवरः ॥४॥
 तत्पार्श्वे श्रीजिनद्रोक्तं धर्मं शर्माकरं द्विधा। समाकर्ण्य सुधीर्मत्री शकटालो गुणोज्ज्वलः ॥५॥
 मुनिर्भूत्वा लसद्भक्त्या ज्ञात्वा शास्त्रार्थमुत्तमम्। आचार्यत्वं समासाद्य गुरोः पादप्रसादतः ॥६॥
 कुर्वन्विहारमत्युच्चैर्भव्यान्सम्बोधयन्सुखम्। कुर्वन्धर्मोद्यमं पूतं दुर्गतिच्छेदकारणम् ॥७॥
 पुनः पाटलिपुत्राख्यं पुरमागत्य शुद्धधीः। नन्दस्यान्तःपुरे चर्या कृत्वा स्वस्थानकं गतः ॥८॥
 पूर्ववैरेण पापात्मा वरादिरुचिकस्तदा। नन्दं भूपं प्रति प्राह भो नरेन्द्र विचक्षण ॥९॥
 भिक्षामिषेण ते गेहं संप्रविश्य प्रवेगतः। तवान्तःपुरके कष्टं शकटालः सुधूर्तकः ॥१०॥
 अन्यायं च विधायैव स्वस्थानं गतवानिति। पापी दुर्गतिभाक् प्राणी किं करोति न पातकम् ॥११॥

जैनी था, इसलिए सुतरां उसकी जैनधर्म पर अचल श्रद्धा या प्रीति थी और वररुचि जैनी नहीं था, इसलिए सुतरां उसे जैनधर्म से, जैनधर्म के पालने वालों से द्वेष करती थी और इसलिए शकटाल और वररुचि की कभी न बनती थी, एक से एक अत्यन्त विरुद्ध थे ॥२-३॥

एक दिन जैनधर्म के परम विद्वान् महापद्म मुनिराज अपने संघ को साथ लिए पटना में आए। शकटाल उनके दर्शन करने को गया। बड़ी भक्ति के साथ उसने उनकी पूजा-वन्दना की और उनके पास बैठकर मुनि और गृहस्थ धर्म का उनसे पवित्र उपदेश सुना। उपदेश का शकटाल के धार्मिक अतएव कोमल हृदय पर बहुत प्रभाव पड़ा। वह उसी समय संसार का सब मायाजाल तोड़कर दीक्षा ले मुनि हो गया। इसके बाद उसने अपने गुरु द्वारा सिद्धान्तशास्त्र का अच्छा अभ्यास किया। थोड़े ही दिनों में शकटाल मुनि ने कई विषयों में बहुत अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। गुरु इनकी बुद्धि, विद्वत्ता, तर्कणाशक्ति और सर्वोपरि स्वाभाविक प्रतिभा देखकर बहुत ही खुश हुए। उन्होंने अपना आचार्य पद अब इन्हें ही दे दिया। यहाँ से ये धर्मोपदेश और धर्मप्रचार के लिए अनेक देशों, शहरों और गाँवों में घूमे-फिरे। इन्होंने बहुतों को आत्महित साधक पवित्र मार्ग पर लगाया और दुर्गति के दुःखों का नाश करने वाले पवित्र जैनधर्म का सब ओर प्रकाश फैलाया। इस प्रकार धर्म प्रभावना करते हुए ये एक बार फिर पटना में आए ॥४-७॥

एक दिन की बात है कि शकटाल मुनि राजा के अन्तःपुर में आहार कर तपोवन की ओर जा रहे थे। मंत्री वररुचि ने इन्हें देख लिया। सो उस पापी ने पुराने बैर का बदला लेने का अच्छा मौका देखकर नन्द से कहा-महाराज, आपको कुछ खबर है कि इस समय अपना पुराना मंत्री पापी शकटाल भीख के बहाने आपके अन्तःपुर में, रनवास में घुसकर न जाने क्या अनर्थ कर गया है। मुझे तो उसके चले जाने के बाद ये समाचार मिले, नहीं तो मैंने उसे कभी का पकड़वा कर पाप की सजा दिलवा दी होती। अस्तु, आपको ऐसे धूर्तों के लिए चुप बैठना उचित नहीं। सच है, दुर्गति में जाने वाले ऐसे

ततो नन्देन भूभर्ता महाकोपेन तत्क्षणे। प्रेषितः शकटालस्य घातको मारणेच्छया ॥१२॥
 अहो मूढमतिर्जीवः प्रेरितो दुर्जनेन च। कार्याकार्यं न वेत्येव करोत्येव कुकर्म सः ॥१३॥
 शकटालो मुनीन्द्रोसौ दृष्ट्वा तं घातकं खरम्। ज्ञात्वा तन्मन्त्रिणो दुष्टचेष्टितं पापकारणम् ॥१४॥
 संन्यासेन सुधीर्मृत्वा स्वर्लोके च गतः सुखम्। दुष्टः करोतु दुष्टत्वं भवेन्नित्यं सतां शुभम् ॥१५॥
 सुनन्दोपि तदा राजा कृत्वा सर्वपरीक्षणम्। ज्ञात्वा मुनिं सुनिर्दोषं त्यक्त्वा कोपं प्रवेगतः ॥१६॥
 महापद्ममुनेः पाद-मूले सद्भक्तिनिर्भरः। श्रुत्वा धर्मं जिनैः प्रोक्तं सारसम्पद्विधायकम् ॥१७॥
 निन्दां गह्रां निजां कृत्वा दानपूजाव्रतान्विते। धर्मे श्रीमज्जिनेन्द्राणां संजातः सुतरां रतः ॥१८॥
 भवेज्जन्तुः कुसंगेन महापापस्य भाजनम्। स एव सद्गुरुं प्राप्य संभवेत्पुण्यभाजनम् ॥१९॥
 तस्माद्भव्यैः प्रकर्तव्यं सद्गुरोः सेवनं सदा। प्राप्यते येन सत्सौख्यं स्वर्गमोक्षभवं मुदा ॥२०॥

पापी लोग बुरा से बुरा कोई काम करते नहीं चूकते। नन्द ने अपने मंत्री के बहकावे में आकर गुस्से से उसी समय एक नौकर को आज्ञा दी कि वह जाकर शकटाल को जान से मार आवें। सच है, मूर्ख पुरुष दुर्जनों द्वारा उकसाने पर, करने और न करने योग्य भले-बुरे कार्य का कुछ विचार न कर, अन्याय कर डालते हैं। शकटाल मुनि ने जब उस घातक मनुष्य को अपनी ओर आते देखा तब उन्हें विश्वास हो गया कि वह मेरे को ही मारने को आ रहा है और यह सब कर्म मन्त्री वररुचि का है। अस्तु, जब तक वह घातक शकटाल मुनि के पास पहुँचता है उसके पहले ही उन्होंने सावधान होकर संन्यास ले लिया। घातक अपना काम पूरा कर वापस लौट गया। इधर शकटाल मुनि ने समाधि से शरीर त्याग कर स्वर्ग लाभ किया। सच है, दुष्ट पुरुष अपनी ओर से कितनी ही दुष्टता क्यों न करे, पर उससे सत्पुरुषों को कुछ नुकसान न पहुँच कर लाभ ही होता है ॥८-१५॥

परन्तु जब नन्द को यह सब सच्चा हाल ज्ञात हुआ और उसने सब बातों की गहरी छान-बीन की तब उसे मालूम हो गया कि शकटाल मुनि का कोई दोष न था, वे सर्वथा निरपराध थे। इसके पहले जैन मुनियों के सम्बन्ध में जो उसकी मिथ्या धारण हो गई थी और उन पर जो उसका बे-हद क्रोध हो रहा था उस सबको हृदय से दूर कर वह अब बड़ा ही पछताया। अपने पाप कर्मों की उसने बहुत निन्दा की। इसके बाद वह श्रीमहापद्म मुनि के पास गया। बड़ी भक्ति से उसने उनकी पूजा-वन्दना की और सुख के कारण पवित्र जैनधर्म का उनके द्वारा उपदेश सुना। धर्मोपदेश का उसके चित्त पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसने श्रावकों के व्रत धारण किए। जैनधर्म पर अब इसकी अचल श्रद्धा हो गई ॥१६-१८॥

इस जीव को जब कोई बुरी संगति मिल जाती है तब तो वह बुरे से बुरे पापकर्म करने लग जाता है और जब अच्छे महात्मा पुरुषों की संगति मिलती है तब यही पुण्य-पवित्र कर्म करने लगता है। इसलिए भव्यजनों को सदा ऐसे महापुरुषों की संगति करना चाहिए जो संसार के आदर्श हैं और जिनकी सत्संगति से स्वर्ग-मोक्ष प्राप्त हो सकता है ॥१९-२०॥

सम्यग्दर्शनबोधवृत्तसुतपोरत्नोत्कराराधनामाला श्रीजिनसारसूत्रसहिता पूर्व बुधैर्निर्मिता ।
सद्बोधाम्बुधिभिर्जगत्त्रयहितैः सा शर्मणे श्रीप्रभाचन्द्राद्यैस्तदनुग्रहेण सुधिया चक्रे मयापि श्रिये ॥२१॥
इति कथाकोशे शकटालमुनेराख्यानं समाप्तम् ।

८३. श्रद्धाख्यानम्

विशुद्धकेवलज्ञान-प्रकाशितजगत्त्रयम् । नत्वा जिनं प्रवक्ष्यामि श्रद्धाख्यानं सतां प्रियम् ॥१॥
कुरुजांगलसद्वेशे हस्तिनागपुरे शुभे । विनयधरभूपालो विनयादिवती प्रिया ॥२॥
श्रेष्ठी वृषभसेनाख्यस्तन्नाम्नी श्रेष्ठिनी मता । तयोः पुत्रस्तु संजातो जिनदासो गुणोज्ज्वलः ॥३॥
एकदा तस्य भूभर्तुः कामासक्तस्य कर्मतः । महाव्याधिः समुत्पन्नो भूरिकामो न शान्तये ॥४॥
वैद्या न शक्नुवन्ति स्म तं व्याधिं संचिकित्सितुम् । पीडितस्तेन भूनाथो दुर्जनेन च पापिना ॥५॥
ततः सिद्धार्थसन्नाम्ना शुद्धश्रावकमंत्रिणा । पादौषधमुनेः पादप्रक्षालनजलं शुभम् ॥६॥
दत्तं तस्मै नरेन्द्राय सर्वव्याधिविनाशकम् । श्रीजिनेन्द्रपदाम्भोजचंचरीकेण निर्मलम् ॥७॥

इन सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और सम्यक्तत्परूप रत्नों की सुन्दर माला को प्रभाचन्द्र आदि पूर्वाचार्यों ने शास्त्रों का सार लेकर बनाया है, जो ज्ञान के समुद्र और सारे संसार के जीव मात्र का हित करने वाले थे । उन्हीं की कृपा से मैंने इस आराधनारूपी माला को अपनी बुद्धि और शक्ति के अनुसार बनाया है । यह माला भव्यजनों को और मुझे सुख दे ॥२१॥

८३. श्रद्धायुक्त मनुष्य की कथा

निर्मल केवलज्ञान द्वारा सारे संसार के पदार्थों को प्रकाशित करने वाले जिन भगवान् को नमस्कार कर श्रद्धागुण के धारी विनयधर राजा की कथा लिखी जाती है जो कथा सत्पुरुषों को प्रिय है ॥१॥

कुरुजांगल देश की राजधानी हस्तिनापुर का राजा विनयधर था । उसकी रानी का नाम विनयवती था । यहाँ वृषभसेन नाम का एक सेठ रहता था । उसकी स्त्री का नाम वृषभसेना था । उसके जिनदास नाम का एक बुद्धिमान् पुत्र था ॥२-३॥

विनयधर बड़ा कामी था । सो एक बार इसके कोई महारोग हो गया । सच है, ज्यादा मर्यादा से बाहर विषय सेवन भी उल्टा दुःख का ही कारण होता है । राजा ने बड़े-बड़े वैद्यों से इलाज करवाया पर उसका रोग किसी तरह न मिटा । राजा इस रोग से बड़ा दुःखी हुआ । उसे दिन-रात चैन न पड़ने लगा ॥४-५॥

राजा का एक सिद्धार्थ नाम का मंत्री था । यह जैनी था । शुद्ध सम्यग्दर्शन का धारक था । सो एक दिन उसने पादौषधिऋद्धि के धारक मुनिराज के पाँव प्रक्षालन का जल लाकर, जो कि सब रोगों का नाश करने वाला होता है, राजा को दिया । जिन भगवान् के सच्चे भक्त उस राजा ने बड़ी श्रद्धा के साथ उस जल को पी लिया उसे पीने से उसका सब रोग जाता रहा । जैसे सूरज के उगने